# साहित्य का अपना लोकतंत्र होता है

**बाजार बनते 'लिटरेचर फेस्टिवल्स' की बाढ़ के दौर में साहित्य अकादेमी का सधा साहित्योत्सव साहित्य के वास्तविक मूल्य को प्रकट करता है।**

डॉ. राजेश कुमार व्यास

**साहित्योत्सव**

साहित्य अकादेमी द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित किया जाने वाला 'साहित्योत्सव-2025' हाल ही में दिल्ली के रवींद्र भवन में संपन्न हुआ। इस बार उत्सव में देशभर के विभिन्न भाषाओं के 723 लेखकों ने भागीदारी की। हमारे यहां की प्रमुख नदियों गंगा, गोदावरी, कावेरी, नर्मदा आदि के नाम पर बने सभागारों में भारतीय संस्कृति और विरासत पर इस दौरान महती विषयों पर विमर्श, बहुभाषी कविता पाठ, कहानी और संवाद, व्याख्यान के विविध सत्र हुए। यह आयोजन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कहा जा सकता है कि इसमें साहित्य का कथित कोई खास तबका प्रमुख स्थान पर नहीं था। हर भाषा के नए और स्थापित साहित्यकार एक मंच पर थे।

बाजारू तड़क-भड़क के बजाय सहज, सधे सत्रों में ढेर सारा अच्छा भी था, तो कुछ कच्चा, भविष्य में पक्का होने की उम्मीद जगाने वाला था। पर बाजारवाद में गुम होते साहित्यिक मूल्यों और अपनी स्थापना के आग्रह में, अपने को बड़ा बनाने की होड़ में दूसरों को

छोटा साबित करने की दृष्टि नहीं थी। यही इसकी बड़ी विशेषता भी कही जा सकती है।

असल में पिछले कुछ समय के दौरान 'लिटरेचर फेस्टिवल्स' की बाढ़ सी आ गई है। सभी में नहीं, पर प्राय: इनमें बाजार की शक्तियां इस कदर प्रमुख होती हैं कि साहित्य के संवेदना मूल्य गौण होते जा रहे हैं। जयपुर में वर्ष 2006 से एक बड़ा उत्सव 'जयपुर लिटरेचर फेस्टिवल' के नाम से प्रारंभ हुआ था। आरंभ में यह साहित्य की संवेदना लिए भारतीय भाषाओं और विदेशी लेखकों से संवाद का बेहतरीन मंच बना, परंतु शनैः शनैः यह भी पूरी तरह से उपभोक्तावाद की पाश्चात्य संस्कृति के प्रसार का संवाहक बनता चला गया। यहां तक तो फिर भी ठीक था, पर इधर ऐसे होने वाले मेले बहुत से स्तरों पर भ्रमित करने लगे हैं। कोई मेला, उत्सव चाहकर भी किसी को लेखक, कलाकार नहीं बना सकता। परंतु यहां जिस तरह से लेखन से जुड़ी चमक-दमक और लेखक बनने के तरीकों पर चर्चा होती है, भ्रमित पीढ़ी इस क्षेत्र में भी कॅरिअर तलाश करने लगी है।

अपने पैसों से पुस्तकें छपाने और मार्केटिंग से साहित्य क्षेत्र में स्थापित होने की चाह और दृष्टि से समर्थ पर लेखन की संवेदना से कोसों दूर लोगों को भी इस क्षेत्र में राह बताने लगी है। साहित्य के ऐसे कथित उत्सव भ्रमित तो करते ही हैं, बहुत से स्तरों पर वास्तविक लेखकों से पाठकों को दूर भी करते हैं। साहित्य मानवीय संवेदना और नैतिक मूल्यों से जुड़ा क्षेत्र है। इसका अपना लोकतंत्र है। यहां कोई बड़ा लेखक बनता है और पढ़ा जाता है और भविष्य में भी रहता है, तो वह केवल और केवल अपने अच्छे लेखन के बूते ही हो सकता है। चमक दमक, साहित्य उत्सवों में भागीदारी और ढेर सारी पुस्तकों के लेखक के रूप में कुछ समय के लिए व्यक्ति की पहचान बन सकती है, परंतु अंतत: अच्छा लेखन ही लेखक को स्थापित करता है।

इस दृष्टि से साहित्य अकादेमी का 'साहित्योत्सव' महत्वपूर्ण है कि इसमें भाग लेने के लिए किसी प्रकार की औपचारिकता की जरूरत नहीं होती। साहित्य में रुचि रखने वाला कोई भी इसमें नि:शुल्क चाहे जिस सत्र में लेखकों के निकट पहुंच, उन्हें सुन-गुन सकता था। बतिया सकता था। साहित्य अकादेमी के सचिव डॉ. के श्रीनिवास राव की पहल से इस बार के उत्सव में एक अनूठी पहल यह भी हुई कि ज्ञानपीठ से सम्मानित प्रख्यात मलयाली लेखक एमटी वासुदेव नायर के उपन्यास नालुकेतु के आलोक में उपन्यास की पृष्ठभूमि और विषय संवेदना पर डी मनोज वईकॉम के छाया चित्र भी प्रदर्शित हुए। बतौर पाठक किसी छायाकार द्वारा उपन्यास को पढ़ने और उसके बाद उससे जुड़े परिवेश, विषय संवेदना को छायांकन कला में जीवंत करने की यह मौलिक दृष्टि पाठकीय संवेदना की अनुपम दृष्टि है। क्या ही अच्छा हो, ऐसे ही विभिन्न कला क्षेत्र साहित्य के निकट आए और साहित्य उनके निकट पहुंच ऐसे ही कुछ नवाचार भविष्य में करें।

यह सच है, संस्कृति की जीवंतता शब्द में समाए जीवनालोक में ही प्रतिबिंबित होती रही है। साहित्य के कथित उत्सवों में रंग-बिरंगी उत्सवधर्मिता क्षणिक होती है। उनसे लेखक-पाठक संबंधों की दीर्घकालीन किसी दृष्टि को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है। भारतीय मानस भावनाओं, संवेदनाओं को जीता है, पर साहित्य का कोई उत्सव आधुनिकता और उपभोक्तावादी मूल्यों को ही जीने वाला होगा, तो उसका परिणाम कालांतर में साहित्य से लोगों की दूरी ही होगी। साहित्य उत्सव का मूल मकसद यही तो होना चाहिए कि वहां हर कोई बगैर किसी झिझक, संकोच के पहुंच सके। जिनको पढ़ता है, पढ़ने को उत्सुक होता है, उनसे सहज मिल सके। इस दृष्टि से साहित्य अकादेमी का सधा-सुनियोजित साहित्योत्सव भविष्य की उम्मीद जगाने वाला है।